जग्गाजी

ये खिड़िया शाखा के चारण थे। इनके पिता का नाम रतनाजी था। इनकी जन्म भूमि आदि का ठीक-ठीक पता नहीं है। इनके वंशज आजकल सामलखेड़ा गाँव में रहते हैं जो सीतामऊ राज्य के अन्तर्गत है। इन्होंने सं.1715 के लगभग 'वचनिका राठौड़ रतनसिंह जी री महेसदासोतरी' नामक एक ग्रंथ बनाया जिसका दूसरा नाम 'रतन रासौ' है। यह ग्रंथ बंगाल की रायल एशियाटिक सोसाइटी की ओर से प्रकाशित भी हो चुका है। इसमें जोधपुर के महाराजा जसवंत सिंह और मुगल सम्राट शाहजहाँ के विद्रोही पुत्र औरंगजेब तथा मुराद के बीच में उज्जैन के रण-क्षेत्र पर सं. 1715 का युद्ध वर्णित है। इस लड़ाई में रतलाम के राठौड़ राजा रतनसिंह बड़ी बहादुरी से लड़ते हुए काम आए थे। इसलिए उन्हीं के नाम से ग्रंथ का नामकरण हुआ। यह एक वीर रस प्रधान ग्रंथ हैं। इसकी भाषा डिंगल है। इसमें गद्य और पद्य दोनों है। ग्रंथ साहित्य-रसिकों एवं इतिहास-प्रेमियों दोनों के काम का है।

वचनिका के अतिरिक्त जग्गाजी के रचे शांत रसात्मक कुछ फुटकर छप्पय भी मिले हैं। इनमें जहाँ डिंगल का ओज है वहाँ भावों की कोमलता भी है। जग्गाजी की रचना के दो नमूने यहाँ दिये जाते हैं—

माया जळ अति विमळ, तास कोइ पार न पावै।
लहर लोभ ऊठन्त, मन्न जेहाज चलावै॥
जग बूड़ै जम हँसे, पाव कर कहूँ न लग्गै।
पीठ पार नइ कोइ, पार नह कोई अग्गै॥
अत वार वहै आपै अनँत, सह विदु हुय जावै सगा।
तक बिट नांम श्री रांम रौ, जग-समंद तिर तूं जगा॥

Scanned by CamScanner

इणि भाँति सूं चारि राणी त्रिण्हि खवासि द्रव्य नाळेर उछाळि बळण चाली। चंचलां चड़ि महासवर री पाळि आइ ऊभी रही । किसड़ी हेक दीसै। जिसड़ी किरतिआँ रौ झूंबकौ। कै मोतियाँ री लड़ि। पवंगाँ सूं ऊतरि महापवीत ठौड़ि ईसर-गोरिज्या पूजी। कर जोड़ी कहण लागी। जुगि जुगि औ हीज धणी देज्यौ। न माँगाँ वात दूजी। पछे जमी आकास पवन पाणी चन्द सूरिज नूं परणाम करि आरोगी दोली परिक्रमा दीन्ही। पाछै आप रै पूत परिवार नै छेहली सीखमति आसीस दीन्ही।[6]

किशोरदास

ये राव जाति के कवि मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के आश्रित थे। इन्होंने 'राजप्रकाश' नाम का एक ग्रंथ सं.1719 में बनाया ज़िसमें महाराणा राजसिंह के विलास-वैभव और शौर्य-पराक्रम का वर्णन है। सब मिलाकर 132 छंदों में ग्रंथ समाप्त हुआ है। इसकी भाषा डिंगल है। बहुत उच्चकोटि का साहित्यिक ग्रंथ है। रचना इस ढंग की है—

गणपति सरसति गरुड़पति, ब्रषपति हंसपति बांणि।
तुस्ट होय मो दीजियै, जुगति पुस्टि इस्ट जांणि॥
जुगति जगत जीवै जचै, उगति विगति अण पार।
निरत फुरत बांणी नमळ, सुरति सभा संसार॥
राणौ प्रतपै राजसी, धर गिरपाट उधोर।
राज प्रकाशित नाम गहि, कहि कहि राव किसोर॥

गिरधर

ये मेवाड़-निवासी आशिया शाखा के चारण थे। इनका रचना-काल सं.1720 के लगभग हैं। इन्होंने "सगतसिंघ रासौ" नाम का एक ग्रंथ बनाया, जिसमें प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप के छोटे भाई शक्तिसिंह का चरित्र-वर्णन है। दोहा, भुजंगी, कवित्त आदि कुल मिलाकर कोई 500 छंदों में ग्रंथ समाप्त हुआ। इसकी भाषा डिंगल है। रचना प्रौढ़ और इतिहास की दृष्टि से उपयोगी है। उदाहरण—

ऊदळ राणै एक दिन, सभ पूछियौ स कोइ।
अणी सिरै कर आहणै, हूँसारै हूँ सोइ॥1॥
मैंगळ मैंगळ सारिषौ, सीह सारिषौ सीह।
सगतौ उदियासिंघ तण, अग पित जिसौ अबीह॥2॥
चख रत्तै मुख रत्तड़ौ, वैस जिहिं कुळ वग्ग।
सगतै जमदड्ढां सिरै, आफाळियौ करग्ग॥3॥
कियौ हुकुम न कांणि की, ए वट एह अवट्ट।
ऊदळ राण कमखीयौ, पह दी सीख प्रगट्ट॥4॥

---

6. तास = उसका। पाव = पैर। विंट = द्वीप। चंचला = घोड़ों पर। किरतियाँ = कृतिका। पवंगाँ = घोड़े। आरोगी = चिता। दोली = चारों तरफ।

Scanned by CamScanner

वीरभाण

ये जोधपुर राज्य के घड़ोई ग्राम के रहने वाले रत्नू शाखा के चारण थे। इनका जन्म सं. 1745 में और देहावसान सं.1792 में हुआ था। इनका लिखा 'राजरूपक' डिंगल भाषा का एक सुप्रसिद्ध ग्रंथ है जो नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, द्वारा प्रकाशित भी हो चुका है। इसका मुख्य विषय जोधपुर के महाराजा अभयसिंह और गुजरात के सूबेदार शेर बिलंदखाँ की लड़ाई है जो सं. 1787 में अहमदाबाद में हुई थी और जिसमें शेर बिलंदखाँ परास्त हुआ था। परन्तु महाराजा अभयसिंह के पिता महाराजा अजीतसिंह और दादा महाराजा जसवंतसिंह की जीवन-घटनाओं पर भी इसमें खूब प्रकाश डाला गया है। उल्लिखित अहमदाबाद की लड़ाई में वीरभाण महाराजा अभयसिंह के साथ थे। अतः इस ग्रंथ में इन्होंने इस युद्ध का अपनी आँखों देखा वर्णन किया है। राजरूपक की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि इसमें घटनाओं के ठीक-ठीक संवत और युद्ध में भाग लेने वाले सरदार सामंतों आदि के नाम भी दिए गए हैं जो बहुत उपयोगी है। ग्रंथ 46 प्रकाशों में विभक्त है। इसका ऐतिहासिक मूल्य यथेष्ट है। भाषा इस तरह की है—

सुंदर भाल विसाल, अळक सम माळ अनोपम।
हित प्रकास म्रदु हास, अरुण वारिज मुख ओपम॥
क्रपा-धाम नव कंज, नयन अभिराम सनेही।
रुचि कपोळ ग्रीवा त्रिरेख, छबि बेस अछेही॥
निरखंत संत सनमुख निजर, करण पुनीत सुप्रीत कर।
गुण मान दान चाहै सुग्रहि, कवि सुग्यांन और ध्यान धर॥

Scanned by CamScanner

जोधराज

ये आदि गौड़ कुलोत्पन्न अत्रि गोत्रीय ब्राह्मण थे और अपने समय के प्रसिद्ध कवि होने के सिवा अच्छे ज्योतिषी भी थे। इनके पिता का नाम बालकृष्ण था। अपने आश्रयदाता नीमराणा के अधिपति महाराज चन्द्रभान की आज्ञा से इन्होंने हंमीर रासौ लिखा, जो सं. 1785 में समाप्त हुआ था—

चन्द्र नाग वसु पंच गिनि, संवत माधव मांस।
शुक्ल सत्रतिया जीव जुत, ता दिन ग्रंथ प्रकास॥

हंमीर रासौ नागरी प्रचारिणी सभा, काशी; द्वारा प्रकाशित हो चुका हैं। इसमें चौहाण-कुल-भूषण महाराज हंमीर की वंशावली उनका उलाउद्दीन से वैर, उनकी वीरता, उनके युद्ध-कौशल, उनकी मृत्यु आदि का यथाक्रम तथा विस्तृत वर्णन है और लगभग 1000 छंदों में समाप्त हुआ हैं। रासौ का ढाँचा ऐतिहासिक है पर काव्यपयोगी बनाने की लालसा से कवि ने कथा-वस्तु में परिवर्तन भी यत्र-तत्र किया है। हंमीर का जन्म जोधराज ने सं. 1141 में होना लिखा है, जो ठीक नहीं है। इसी प्रकार हंमीर के आत्महत्या करने तथा अलाउद्दीन के समुद्र में कूदकर मर जाने की कथाँए भी अनैतिहासिक और प्रमाण-शून्य हैं। हंमीर रासौ में जोधराज ने हंमीर, अलाउद्दीन तथा महिमाशाह इन तीन व्यक्तियों के चरित्र को विकसित करने का उद्योग किया है और इसमें इन्हें अच्छी सफलता मिली है; हंमीर के चरित्र-चित्रण में। हंमीर जैसे वीर और स्वदेशाभिमानी पुरुष का जिस ढंग से वर्णन होना चाहिए उसी ढंग से रासौ में हुआ है। हंमीर और अलाउद्दीन का स्वर्ग में सम्मेलन करा कर कवि ने पाठकों का ध्यान शायद हिन्दू-मुस्लिम एकता की ओर आकर्षित किया है। पर समझ में नहीं आता कि ऐसा करने में उनका वास्तविक अभिप्राय क्या था? यदि अलाउद्दीन जैसा नृशंस, हृदय-हीन तथा पतित मनुष्य भी मरने के पश्चात् स्वर्ग में पहुँचता है तो फिर नरक है किसके लिए?

हंमीर रासौ एक वीर रस प्रधान काव्य ग्रन्थ है। पर शृंगार की अद्‌भुत छटा भी इसमें इधर-उधर दीख पड़ती है। इससे मालूम होता है कि जोधराज का शृंगार और वीर दोनों रसों पर अच्छा अधिकार था। इन्होंने प्रकृति वर्णन तथा ऋतु-वर्णन भी बहुत अच्छे ढंग से किया है। इनकी कविता देखिए—

Scanned by CamScanner

मिले बंधु दोउ धाय। बहु हरष कीन सुभाय॥
अब स्वामि धर्म सुधारि। दोउ उठे वीर हँकारि॥
असमान लग्गिय सीस। मनौं उभैं काल सदीस॥
इत कोप महिमा कीन्ह। हम्मीर नौन सु चीन्ह॥
उत मीर गभरू आय। मिली सेख के परि पाँय॥
कर तेग वेग समाहि। रहि दूहूँ सेन सचाहि॥
कम्मान लीन सुहत्थ। जनु सार कार सुपत्थ॥
धरि स्वामी काज समत्थ। दोउ उभै जुद्ध सपत्थ॥
दुहुँ द्वन्द्ध जुद्ध सुकीन। मनु जुटे मल्ल नवीन॥
तर वारि बज्जिय ताय मनु लगी ग्रीषम लाय॥
करि चरण सीस रु हत्थ। परि लत्थ जुत्थ सुतत्थ॥
घसमान थान सु धीर। धर धरनि खेलत बीर॥
गजराज लुट्ठत भुम्मि। बहु तुरंग परत सु झुम्मि॥
विय बीर बज्जिय सार। तरवार बरसहु धार॥
दोउ भात स्वामि सकाम। जग में किय अति नाम॥
दोहुँ वीर देखत दूर। चढ़ि गये मुख अति नूर॥
दल दोय दिखखत बीर। पहुँचे बिहस्त गहीर॥

तजिये तप पावस वित्त सबै। ऋतु शारद बादर दीस अबै॥
सरिता सर निम्मल नीर बहै। रस रंग सरोज सुफल्लि रहैं॥
बहु खंजन रंजन भृंग भ्रमैं। कलहंस कलानिधि वेद भ्रमैं॥
बसुधा सब उज्जल रूप कियै। सित बासन जानि बिछाय दियै॥
बहु भाँति चमेलिया फूलि रही। लखि मार सुमार सुदेह दही॥
बन रास विलास सुबास भरै। तिय काम कमान सुतानि धरैं॥
भ्रमणै पर तै नर काम जगै। विरही सुनि कै उर घाव खगै॥
घर अम्बर दीपक जोति जगी। नर नारि लखे उर प्रीति पगी॥

Scanned by CamScanner